

वित्तीय प्रणाली और समष्टि अर्थव्यवस्था पर कैफराल सम्मेलन: उद्घाटन वक्तव्य*

उर्जित आर पटेल

1. आज सुबह आप के बीच आकर मुझे इस बात की अतीव प्रसन्नता हो रही है कि मैं अपने अवलोकनों और विचारों से आपको अवगत करा सकूंगा। इस अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन की थीम - "वित्तीय प्रणाली और समष्टि अर्थव्यवस्था" और प्रस्तुति के लिए निर्धारित आलेखों में उन बहुत सी समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है, जिनके साथ रिज़र्व बैंक जूझता रहा है। कहना अनावश्यक होगा कि भारतीय अर्थव्यवस्था पर बारीक नजर रखने वाले कुछ सहभागियों को पहले से ही यह जानकारी हो गई होगी कि अब मैं सारतत्व के रूप में क्या कहने वाला हूँ, लेकिन बाकी को शायद यह मालूम नहीं होगा, और मेरा विश्वास है कि मेरे ये अभिमत उनके लिए सहायक होंगे।

2. भारत में हमारे लिए काफी घटना प्रधान सन् 2017 अब समाप्त होने के साथ ही कुछ महत्वपूर्ण रूपान्तरण भी होने को हैं, यथा - मौद्रिक नीति समिति के निर्णयों सहित नई मौद्रिक नीति का फ्रेमवर्क; उच्च मूल्यवर्ग के करेन्सी नोटों का विमुद्रीकरण; वस्तु और सेवा कर (जीएसटी) व्यवस्था की शुरुआत; दिवाला और ऋण-शोधन अक्षमता संहिता (आईबीसी); बैंकिंग विनियमन (संशोधन) अधिनियम का प्रवर्तन और सरकार के स्वामित्व वाले बैंकों के लिए पुनर्पूजीकरण की योजना। क्योंकि ये अहम परिवर्तन भारत के वित्तीय क्षेत्र के परिदृश्य को रूपाकार प्रदान करेंगे, इसलिए मैं इस अवसर पर संक्षेप में वर्णन करना चाहूँगा कि वे इस परिदृश्य को किस प्रकार से आकार प्रदान करेंगे।

3. **समष्टि आर्थिक स्थायित्व को दृढ़ता प्रदान करना** : हाल ही की अवधि में दो अहम गतिविधियां हो चुकी हैं। पहली यह कि भारत में मौद्रिक नीति का प्राथमिक प्रयोजन स्पष्ट

रूप से परिभाषित कर दिया गया है अर्थात् संवृद्धि के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए कीमत में स्थायित्व लाना। दूसरे यह कि संशोधित भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम (2016) में परिभाषित इस लक्ष्य के अनुसरण में बेन्चमार्क नीतिगत दर निर्धारित करने के दायित्व सहित एमपीसी का गठन किया गया है। स्फीति की प्रत्याशाओं और परिणामों को आकार देने में नवीन मौद्रिक नीति फ्रेमवर्क एक अहम भूमिका निभा रहा है। कुछ अवस्फीति चल रही है तथापि स्फीतिकारी प्रत्याशाएँ संभवतया फिर से स्थायित्व ले रही हैं, जो नए फ्रेमवर्क द्वारा अर्जित विश्वसनीयता का कुछ हद तक संकेत दे रहा है, लेकिन ये अभी आरंभिक दिन हैं और इसीलिए स्फीति के मोर्चे पर पर्याप्त सावधानी और सतर्कता अपेक्षित है। स्फीतिकारी दबावों को काबू में रखने में हाल ही में मिली सफलता को समष्टि आर्थिक स्थायित्व की प्रतिस्थापना के व्यापक संदर्भ में देखने की जरूरत है, जिसके लिए सरकार ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।¹

4. इसके साथ ही चालू खाते का घाटा व्यवहार्य स्तरों के भीतर रहा, बाह्य अर्थक्षमता के अन्य संकेतक, यथा जीडीपी की तुलना में ऋणग्रस्तता के अनुपात और/अथवा आरक्षित निधियाँ भी स्वस्थ सुधार को प्रकट कर रही हैं। सरकार ने राजकोषीय समेकन का पथ चुना है और सरकारी देनदारी तथा जीडीपी का अनुपात क्रमिक रूप से घट रहा है। भारतीय अर्थव्यवस्था की वर्तमान स्थिति को देखकर अन्तरराष्ट्रीय निवेशक उत्साहित हैं और यह पर्याप्त मात्रा में विदेशी निवेश के अन्तर्वाह से परिलक्षित होता है। इसी बीच विश्वव्यापी भू-राजनैतिक अनिश्चितता और वित्तीय बाजारों में अत्यधिक परिवर्तनशीलता में बढ़ोतरी के बावजूद स्वदेशी वित्तीय बाजारों ने जुझारूपन और स्थायित्व दिखाया है। इन गतिविधियों ने अप्रत्याशित आघातों के प्रति "बफर" तैयार करने में सक्षमता प्रदान की।

5. **गैर-निष्पादक आस्तियों की समस्या पर काबू पाना** : दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान के सम्बन्ध में दिवाला और ऋण-शोधन अक्षमता संहिता (आईबीसी) 2016 एक महत्वपूर्ण गतिविधि है। रिज़र्व बैंक के दृष्टिकोण से इस संदर्भ में बैंकिंग विनियमन (संशोधन) अध्यादेश का प्रवर्तन और बाद में इस साल अगस्त माह में इसका अधिनियमन

* 7 दिसंबर 2017 को मुंबई में "वित्तीय प्रणाली और समष्टि अर्थव्यवस्था" पर आयोजित कैफराल सम्मेलन में उर्जित आर. पटेल, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा दिया गया भाषण।

¹ सरकार अन्य बातों के साथ-साथ कुछ अहम खाद्य मर्दों पर कीमत के दबाव का प्रबंधन करने में सक्रिय रही है।

बहुत बड़ा सक्षमकारी तत्व रहा है। इससे रिज़र्व बैंक को यह प्राधिकार मिला और समाधान प्रक्रिया आरंभ करने हेतु निर्देश जारी किए जा सके; बैंकों के तुलनपत्रों में दबाव से निर्णायक तौर पर निपटने और संवृद्धि के चक्र को सहज बनाने के लिए क्रेडिट के प्रवाह की बाधा हटाने में रिज़र्व बैंक की क्षमता इससे बढ़ी है। आगामी वर्ष के दौरान हमें इस अवसर को लपकना होगा ताकि निगमगत ऋणों में अपचार से पैदा हुई कमजोर कर देने वाली समस्या से निपटा जा सके और अपने बैंकों को फिर से वित्तीय मध्यस्थता की मुख्य धारा में लाया जा सके। सरकारी क्षेत्र के बैंकों के पुनर्पूजीकरण के लिए सरकार द्वारा हाल ही में तैयार की गई योजना यह सुनिश्चित करेगी कि उत्पादक क्षेत्रों (ऋण देने योग्य कर्जदारों) को मिलने वाले क्रेडिट प्रवाह बाधित नहीं हों और संवृद्धि के संवेग को बल मिले। बैंकों के बोर्डों को मजबूत करके, प्रबंधनवर्ग की नियुक्तियों में उद्देश्यपरकता लाकर और व्यावसायिक बोर्ड के लिए निर्णयों को विकेंद्रित करके सरकार ने सरकारी क्षेत्र के बैंकों के निगमगत अभिशासन को सुधारने के कदम उठाने का भी प्रस्ताव किया है।

6. रिज़र्व बैंक द्वारा चालित जोखिम आधारित पर्यवेक्षी प्रक्रिया में बैंकों के तुलनपत्रों में जोखिम को चिह्नित किया जाता है, जिसे उपचार हेतु संबद्ध संस्थानों के सामने प्रस्तुत किया जाता है। विशिष्ट उल्लंघनों/नियमभंग के बारे में पहले प्रभावी प्रवर्तन और कार्यान्वयन में अंतराल रहता था। इस कार्य हेतु प्रवर्तन विभाग की स्थापना अप्रैल 2017 में की गई, ताकि कानून, नियमों और निर्देशों के उल्लंघन से निपटने के लिए नियम आधारित, सुसंगत फ्रेमवर्क तैयार करने के यह अपने अधिदेश पर ध्यान दे सके। ऐसी कार्रवाइयों के माध्यम से प्रत्यावर्तित प्रभावी निवारण से अपेक्षित है कि यह समग्र क्रेडिट संस्कृति को प्रबल बनाने में योगदान करेगा।

7. भारतीय अर्थव्यवस्था एक अहम मुकाम पर है। इस राजकोषीय वर्ष की पहली तिमाही में हमारी संवृद्धि के आंकड़ों ने कुछ एक को निराश किया होगा, लेकिन दूसरी तिमाही में इसने ऊपर की तरफ बढ़ना शुरू किया और गिरावट अब खत्म होने की तरफ है। यदि कोई दूर की तरफ नज़र डाले तो पाएगा कि संरचनागत परिवर्तनों के साथ आनेवाले अस्थायी व्यवधानों से मध्यम से दीर्घ अवधि के बीच दक्षता और संवृद्धि का प्रसार हो सकता है। उदाहरण के लिए वस्तु और सेवा करों की शुरुआत के साथ यही हुआ था। यह प्रतिलाभ बढ़ाएगा और इसका आशय होगा करों का बेहतर अनुपालन

और अधिक दक्ष कराधान प्रणाली जो हमारी संवृद्धि को स्थायी तौर पर ऊपर की दिशा में ले जाएगी। इस सूची में हम एक अन्य महत्वपूर्ण सुधार और जोड़ सकते हैं - विदेशी प्रत्यक्ष निवेश नीति में पर्याप्त उदारता, जिसके कारण प्रत्यक्ष विदेशी निवेशकों की तरफ से भारत में रिकार्ड निवेश किया गया।

8. अब हम भारत का रुख करते हैं और भारतीय अर्थव्यवस्था को अन्तरराष्ट्रीय परिदृश्य में रखते हैं। आज हम सदा-वर्धमान वित्तीय वैश्वीकरण के जगत में रह रहे हैं। आज पूँजी प्रवाह का निरपेक्ष आकार विशाल है और नीति निर्माताओं को चिन्तित करने के लिए इसमें परिवर्तनशीलता भी है। वैश्वीकरण की वजह से सीमा-पार के बाजारों का तीव्रता से एकीकरण हुआ है, जिसमें प्रतिलाभ की तलाश में पूँजी का चपल और विशाल आदान-प्रदान हो रहा है (वर्तमान फैंड पर निर्भर तथाकथित "अल्फा" और "बीटा")। वैश्विक संवृद्धि, व्यापार और कल्याण के नजरिए से अतिशय अर्जन तो हुआ है, लेकिन इसने जोखिमों को बढ़ा दिया है, अदम्य गुरुत्व और गति वाले वित्तीय संकटों के प्रति कमजोरी के लिए तो खासतौर पर। अब प्रश्न उठता है - क्या हम अति-वित्तीयकरण के परिवेश में हैं? हम कुछ आंकड़े ले लेते हैं। सन 1980 और 2015 के बीच वैश्विक जीडीपी के प्रति वैश्विक बाह्य देयताएँ 30 प्रतिशत से बढ़कर 190 प्रतिशत हो गई हैं, जो वैश्विक व्यापार की संवृद्धि (इसी अवधि में जीडीपी के 19 प्रतिशत से बढ़कर 28 प्रतिशत) को काफी पीछे छोड़ देती हैं। इस नए वैश्वीकरण का प्रमुख वाहन रहा है सीमा-पार बैंकिंग प्रवाह, जिसने वित्तीय संकट से पहले के दशक में वैश्विक पूँजी प्रवाह के एक तिहाई हिस्से का निर्माण किया। इसी के सामानांतर राष्ट्रीय सीमाओं के आर-पार जानेवाली आपूर्ति श्रृंखलाओं और खासकर विकासशील विश्व के नए कारोबारियों के प्रादुर्भाव के माध्यम से वैश्विक व्यापार का नेटवर्क आपस में अधिकाधिक जुड़ता गया। उदीयमान बाजार और विकासशील देश एक साथ मिलकर वैश्विक व्यापार में 37 प्रतिशत (सन 2000 से अब तक 15 प्रतिशतता अंक अधिक) का योगदान करते हैं। भारत के सकल वित्तीय सीमा-पार प्रवाह भी (अन्तर्वाह और बहिर्वाह दोनों) बढ़े हैं - सन 2016-17 में जीडीपी का 47 प्रतिशत, जो 1990-91 में जीडीपी का 12 प्रतिशत था। विदेशी प्रत्यक्ष निवेश जैसे सुस्थिर पूँजी प्रवाह जो स्वदेशी प्रतिष्ठानों में सापेक्षतया दीर्घकालिक हितलाभ सहित होते हैं, के अलावा विदेशी पोर्टफोलियो (इक्विटी और ऋण दोनों) पूँजी प्रवाह भी बढ़ा है, जिससे अर्थव्यवस्था (अन्य खुले उदीयमान बाजारों

सहित) बढ़ी हुई परिवर्तनशीलता और अचानक विराम अथवा व्युत्क्रमी जोखिमों के प्रति संवेदनशील हो जाती है।

9. जिस प्रकार अन्य उदीयमान बाजारों की तरह - भारत भी निसंदेह वैश्वीकरण से लाभान्वित हुआ है, तो साथ ही हम इसके साथ आने वाली कमजोरियों के प्रति भी पहले की तुलना में अधिक अनावृत हो गए हैं। बाह्य विश्व पर हमारी बढ़ती हुई निर्भरता हमारी बाह्य देयताओं (ऋण और गैर-ऋण दोनों) की बकाया रकम से प्रकट होती है, जो मार्च 2005 में जीडीपी के 30 प्रतिशत से बढ़कर मार्च 2017 में 41 प्रतिशत हो गई है। भारत की निवल अंतरराष्ट्रीय निवेश स्थिति (अर्थात् बकाया आस्तियों में से देयताओं को घटाकर) इस अवधि में जीडीपी के 7 प्रतिशत से बढ़कर जीडीपी का लगभग 17 प्रतिशत हो गई है। शेष विश्व के प्रति बढ़ती हुई निवल देयताओं द्वारा वित्तपोषित चालू खाते में सतत घाटे के दीर्घकालिक चरण के साथ यह सुसंगत ही है। विगत वर्षों के दौरान सीमाओं में राहत के साथ विदेशी पोर्टफोलियो पूंजी प्रवाह में वृद्धि हुई है (निश्चय ही पूंजी की दुर्लभता वाले देशों में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रवाहों से निश्चित आर्थिक लाभों के संदर्भ में इसकी तारीफ करनी होगी)।

10. देश में आनेवाले और देश से बाहर जानेवाली पूंजी का आवागमन दूसरे देशों के नीतिगत चक्रों से अक्सर जुड़ा रहता है, जिससे अन्तरराष्ट्रीय नीति के प्रभावों के सामने चुनौती खड़ी हो जाती है। प्रत्येक नई अनपेक्षित घटना के साथ प्रभावक्षेत्र व्यापक होता जाता है, परिवर्तनशीलता उच्चतर हो जाती है और उदीयमान बाजार जिस मामूली सी सुरक्षा व्यवस्था का बन्दोबस्त करने में सक्षम होते हैं उसके दमन का खतरा पैदा हो जाता है। ऐसे जगत में कोई भी नीतिगत आजादी की हिफाजत कैसे करता है? क्या हमारे लिए सार्थक और गहन अन्तरराष्ट्रीय नीतिगत समन्वय जरूरी है? या फिर सार्वभौमिकता के स्थान पर रंगभेद की याद दिलाने वाले और बहुत कम देशों को वर्तमान में उपलब्ध असंयमित सुरक्षा के स्थान पर सार्वभौमिक वित्तीय सुरक्षा का नेट चाहिए। इसी बीच जो उदीयमान बाजार वैश्विक वित्तीय संकट के सामने पड़े उन्हें इस प्रकार के जोखिम को शेयर करने से प्रणालीगत रूप से वर्जित किया गया। इस विभाजित पद्धति को समाप्त करने और केवल विशेषाधिकार प्राप्तों की बजाए समान रूप से उपलब्ध स्वैप लाइनों तक सभी को पहुँच प्रदान करने का समय आ चुका है।² यद्यपि उदीयमान बाजारों ने हाल ही के वर्षों में हुई खलबली को सहन करके उससे उबरने की कुछ अवस्थाएं प्रकट की हैं, तथापि संक्रमणकालीन होते हुए भी

कमजोर कर देने वाले वित्तीय अंतरालों को भरने और चलनिधि की दृष्टि से सुभेद्य बने रहे।³ इस पृष्ठभूमि में विदेशी मुद्रा रिज़र्व के रूप में पर्याप्त बफर का निर्माण इन जोखिमों से निपटने के लिए स्वाभाविक स्वतः बीमा करने जैसा है, इससे वित्तीय स्थायित्व के लिए खतरा पैदा करने वाले अनुमानित प्रणालीगत समानुपातों से जोखिमों से बचाव और इन जोखिमों से निपटने के लिए स्वाभाविक स्वतः बीमा करने जैसा है, इससे वित्तीय स्थायित्व के लिए खतरा पैदा करने वाले अनुमानित प्रणालीगत समानुपातों से जोखिमों से बचाव और इन जोखिमों का बेहतर प्रबंधन होता है। व्यापक स्वैप नेटवर्क के अभाव में प्रत्येक देश का समष्टि आर्थिक परिवेश नीतिगत उपायों के चयन की जानकारी देगा। ऐसी दशा में अन्तरराष्ट्रीय वित्तीय स्थायित्व के लिए उस समय खतरा पैदा हो जाता है जब किसी एक देश में इस बफर की अपर्याप्तता के कारण पैदा हुआ संकट विश्वव्यापी समानुपात में बंट जाता है। इसी प्रकार पूंजी खाते को उदार बनाने के लिए कोई समान्य संहिता अथवा समरूपी पद्धति नहीं हो सकती है। तीव्र पूंजी प्रवाहों के प्रबंधन को सैद्धांतिक मुख्यधारा (और व्यवहार में भी) समष्टि विवेकपूर्ण टूल किट के परम्परागत तथ्य रूपी घटकों को कई प्रकार से शामिल करने की जरूरत है। वस्तुतः समष्टि-विवेकपूर्ण उपाय के रूप में विदेशी मुद्रा रिज़र्व के प्रयोग को हतोत्साहित करने का कोई भी प्रयास यह अनिवार्यता पैदा करेगा कि पूंजी प्रवाहों का प्रबंधन और भी सक्रियतापूर्वक किया जाए। सम्मेलन में आज और कल जो विमर्श होंगे शायद इस मामले में संवादों का निर्माण करें।

11. सम्मेलन में यह प्रयास किया जाए : इस प्रकार की नितियाँ कैसे प्रभावी हैं? क्या हम इन पर अल्पावधिक हस्तक्षेप के रूप में विचार करें अथवा दीर्घावधि नीतियों के रूप में।

12. आस्ति-बुलबुले से भी वित्तीय स्थायित्व खतरे में पड़ता है। प्रतिलाभ की तलाश कर रहे निवेशक-स्वदेशी और विदेशी दोनों - आस्ति बाजारों में खुदबुदाहट को प्रेरित (योगदान) कर

² इस संदर्भ में एक बात पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया और वह यह है कि इस नेटवर्क में जो अर्थव्यवस्थाएँ/केन्द्रीय बैंक विशेषाधिकार प्राप्त सदस्य हैं उन्हें (निहितार्थ और अनजाने ही) अविचारी रहने की प्रेरणा मिल जाती है या वे ऐसी नीति का अनुसरण करते हैं जो वैश्विक कल्याण की दृष्टि से उपयोगी नहीं होती, दूसरे शब्दों में कहें तो शायद नैतिक खतरा बढ़ जाता है।

³ हिस्टेरिसिस के कारण वास्तविक अर्थव्यवस्था के निहितार्थ गहरे और टिकाऊ हो सकते हैं।

⁴ देशों का नाम रखते हुए उन्हें लज्जित करने की परिपाटी के बारे में विचारपूर्वक फिर से सोचने की जरूरत है, जैसे कि "मुद्रा जुगाड़ करने-वाले"; क्योंकि इसके पीछे का आर्थिक तर्क संदेहजनक है।

सकते हैं। मौद्रिक नीति का निर्धारण करते समय केन्द्रीय बैंकर्स आस्ति बाजारों में इस बुदबुदाहट पर कितना ध्यान दे सकते हैं?

13. आस्ति बाजारों और वास्तविक अर्थव्यवस्था के बीच सम्पर्क एक अन्य क्षेत्र है जिसमें केन्द्रीय बैंकों को ध्यान बनाए रखना होता है। यद्यपि यह मामला संभवतया वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान सामने आया तथापि गुणात्मक और मात्रात्मक रूप से इन्हें जोड़ने वाली व्यवस्था और चैनल मौद्रिक नीति के लिए बुनियादी महत्व के होते हैं।

14. नीति निर्माताओं के लिए इसी से जुड़ा हुआ चिन्ता का स्रोत है - स्फीति का प्रबंधन। वैश्विक रूप से खासकर

विकसित अर्थव्यवस्थाओं में स्फीति के कारकों को निर्धारित करने में अनिश्चितता बढ़ रही है। क्या हमें मौद्रिक संचारण व्यवस्था के ही बारे में फिर से सोचने की जरूरत है या फिर नीति और स्फीति के बीच पारंपरिक सम्पर्क में हालिया कमजोरी एक अस्थायी लक्षण है?

15. इस सम्मेलन में बहुत से आलेखों में इनमें से कुछ विषयों पर चर्चा होगी। मुझे आशा है कि सफल विचार-विमर्श हों जो इस विषय पर सिर्फ इस चर्चा को आगे नहीं बढ़ाएंगे बल्कि उम्मीद है कि नीति की गहनता पर भी कुछ प्रकाश डालेंगे।

16. धन्यवाद।